मानवता के रहबर श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी

सिखों के वर्तमान गुरू श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी वास्तव में समस्त मानवता के रहबर हैं। संसार के जिन भी चिन्तकों और विद्वानों ने श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी की बाणी का अध्ययन किया है, वे सभी एकमत होकर यही बात कहते हैं। उनमें से नोबल पुरस्कार विजेता मिस पर्ल एस. बक्क और संसार की सभ्यता का इतिहास लिखने वाले विद्वान आनलर्ड टायनबी के विचार नीचे दिए जा रहे हैं :

पर्ल एस. बक्क : ''मैंने और भी धर्मों के ग्रंथ पढ़े हैं, परन्तु मुझे कहीं भी हृदय और मस्तिष्क को झंजोड़ने वाली वह शक्ति नहीं मिली, जो श्री गुरू ग्रंथ साहिब में से प्राप्त हुए है।...इसमें मानवीय हृदय की अथाह पकड़ वाली बातों का भेद उजागर किया हुआ है। परमात्मा के पवित्र विचार से लेकर मानवीय शरीर जिन साधारण वस्तुओं को मानता और उनका समाधान करता है, उन सभी का वर्णन और प्रकटाव इसमें है। इसमें एक वचित्र आधुनिकता है।......कोई मनुष्य चाहे वह किसी भी धर्म से सम्बन्धित हो, अथवा नास्तिक ही क्यों न हो, यह बाणी सबको एक ही प्रकार से सम्बोधन करती है, क्योंकि इसकी आवाज़ मानवीय हृदय और कुछ ढूंढ रहे हृदयों के लिए है।''

आर्नल्ड टायनबी : ''मानवता का धार्मिक भविष्य चाहे धूमिल हो जाए, एक वस्तु कम-से-कम देखी जा सकती है। वह यह कि बड़े जीवित धर्म एक-दूसरे पर पहले से भी अधिक प्रभाव डालेंगे, क्योंकि धरती के अलग-अलग क्षेत्रों और मानवीय नस्लों की अलग-अलग शाखाओं में सम्बन्ध बढ़ रहे हैं। **इस होने वाले वाद-विवाद में सिखों की धर्म पुस्तक 'आदि ग्रंथ' के पास संसार के धर्मों को कहने के लिए जो कुछ है, उसकी विशेष महत्ता और कीमत है।''**

गुरू अरजन देव जी ने श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी की सम्पादना करने के पश्चात अन्त में फुर्माया है कि मैंने गुरू ग्रंथ साहिब रूपी थाल संसार को अध्यात्मिक भोजन का परोस कर दिया है। इस भोजन में उच्च आचरण (सत्य), सांसारिक पदार्थों द्वारा सन्तुष्टि (सन्तोष) और आत्मिक सूझ (वीचारो) रूपी वस्तुएं पड़ी हैं। प्रभु की सिफति-सालाह (नाम) भी पड़ा है। जो भी व्यक्ति इस आत्मिक भोजन का सेवन करेगा, इसको पचाएगा, उसका जीवन हर पक्ष से सफल होगा। संसार को इस भोजन की अत्यंत आवश्यकता है। इसके बिना मानव जीवन की सफलता असम्भव है; इसलिए गुरबाणी को हृदय में बसाना चाहिए :

थाल विचि तिंनि वसतू पईओ, सतु संतोखु वीचारो॥
अंम्रित नामु ठाकुर का पइओ, जिस का सभसु अधारो॥
जे को खावै, जे को भुंचै, तिस का होइ उधारो॥

एह वसतु तजी नह जाई, नित नित रखु उरि धारो॥
तम संसारु चरन लगि तरीऐ, सभु नानक ब्रहम पसारो॥ १॥

(मुंदावणी, महला ५, १४२९)

श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी की बाणी के बारे में सतिगुरों ने स्पष्ट किया है कि यह उनके अपने विचार नहीं हैं, बल्कि अकाल पुरख द्वारा प्राप्त हुआ ज्ञान है; हम तो इस ज्ञान को संसार तक पहुंचाने वाले हैं :

जैसी मै आवै खसम की बाणी, तैसड़ा करी गिआनु वे लालो॥

(तिलंग, महला १, ७२२)

हउ आपहु बोलि न जाणदा, मै कहिआ सभु हुकमाउ जीउ॥

(सूही, महला ५, ७६३)

सतिगुर की बाणी सति सति करि जाणहु गुरसिखहु
हरि करता आपि मुहहु कढाइ॥

(गउड़ी की वार, महला ४, ३०८)

गुरबाणी का संकलन और सम्पादना

श्री गुरू नानक देव जी जो बाणी उच्चारण करते थे, वे एक पोथी में लिख लेते थे। इसी पोथी में उन्होंने वह बाणी भी दर्ज कर ली थी, जो धर्म प्रचार के लिए की गई प्रचार यात्राओं (उदासियों) के समय अलग-अलग भक्तों और श्रद्धालुओं और बाबा शेख फरीद जी की गद्दी पर ग्यारवें स्थान पर बैठे शेख ब्रह्म से प्राप्त की थी। यह पोथी गुरू जी हमेशा अपने पास रखते थे। जब आप मक्के गए तो हाजियों ने इसी पोथी की तरफ संकेत करके कहा था कि यह बताओ कि हिन्दू बड़ा है या मुस्लमान। सतिगुरों ने उत्तर दिया था कि शुभ कर्मों के बिना दोनों को ही प्रभु की दरगाह में पछताना पड़ेगा। इस वार्तालाप का ज़िक्र भाई गुरदास जी ने अपनी प्रथम वार में इस प्रकार किया है :

बाबा फिरि मक्के गइया, नील बसत्र धारे बनवारी।
आसा हथि किताब कछि, कूजा बांग मुसला धारी।

(वार १, पउड़ी ३२)

और :

पुछनि गल ईमान दी, काजी मुलां इकठे होई॥
वडा सांग वरताइआ, लखि न सकै कुदरति कोई॥
पुछनि फोलि किताब नो, हिंदू वडा कि मुसलमानोई॥
बाबा आखे हाजीआं सुभि अमला बाझहु दोनो रोई॥

(वार १, पउड़ी ३३)

जब गुरू नानक देव जी ने भाई लहणा जी (गुरू अंगद देव जी) को गुरियाई बख्शिश की तो बाणी की पोथी भी उनको दे दी। इस तथ्य का उल्लेख '**पुरातन जन्म साखी**' में इस प्रकार किया गया है :

तित महल जो सबद होआ,
सो पोथी गुरू अंगद जोग मिली॥

गुरू अंगद देव जी ने अपने द्वारा उच्चारण ६३ श्लोक भी इस पोथी में दर्ज कर लिए और गुरू अमरदास जी को गुरियाई बख्शिश करते समय यह पोथी उनको दे दी। गुरू अमरदास जी ने अपनी बाणी सहित यह पोथी गुरियाई की बख्शिश करते समय गुरू रामदास जी को सौंप दी। उन्होंने अपनी बाणी और प्रथम सतिगुरों की बाणी गुरू अरजन देव जी को गुरियाई बख्शिश करते समय सौंप दी। इस प्रकार समस्त बाणी सुरक्षित रूप में गुरू अरजन देव जी के पास पहुंच गई। आप जी ने भी बाणी उच्चारण की और आप जी के पास बाबा सुन्दर जी की 'सदु', भट्टों के सवैये और भाई बलवंड और सत्ते की वार आदिक बाणी भी थी। इस प्रकार गुरू अरजन साहिब जी के पास, बाणी का जो भण्डार एकत्र हो गया, उसमें निम्नलिखित बाणीकारों की बाणी थी :

(क) 5 गुरू साहिब : गुरू नानक देव जी, गुरू अंगद देव जी, गुरू अमरदास जी, गुरू रामदास जी, गुरू अरजन देव (गुरू तेग बहादर जी की बाणी गुरू गोबिंद सिंघ जी ने गुरू ग्रंथ साहिब जी में दर्ज करवाई थी)।

(ख) 15 भक्त : भक्त कबीर जी, नामदेव जी, रविदास जी, त्रिलोचन जी, फरीद जी, बेणी जी, धन्ना जी, जै देव जी, भीखण जी, परमानंद जी, सैण जी, पीपा जी, सधना जी, रामानंद जी और सूरदास जी।

(ग) 11 भट्ट साहिबान : कलसहार, जालप, कीरत, भिखा, सल्ह, भल्ह, नल्ह, बल्ह, गयंद, मथुरा और हरिबंस जी।

(घ) तीन गुरसिख : भाई सत्ता, भाई बलवंड और भाई सुन्दर जी।

गुरू अरजन देव जी ने समस्त बाणी को नए सिरे से रागों के अनुसार क्रम देने का निर्णय किया। गुरबाणी के शब्द-जोड़ (स्पैलिंग) एकसार करने थे और गुरबाणी को विशेष नियमानुसार लिखना था। काव्य-दृष्टिकोण से बाणी कई प्रकार के काव्य-छंदों, शब्दों, अष्टपदियों, छंत, वार, श्लोक आदि में लिखी हुई थी। इनके भी एक विशेष क्रम में लिखा जाना था। यह कार्य बहुत परिश्रम की मांग करता था और भाषा और काव्य-शास्त्र को समझने वाले विद्वान के बस का था। गुरू अरजन देव जी ने भाई गुरदास जी को योग्य जाना और आप ने भाई साहिब को योजनाबंदी समझा कर बाणी नए सिरे से सम्पादन करके लिखने की सेवा बख्श दी।

समस्त बाणी को मौजूदा नया स्वरूप देते समय रागों के अनुसार करने के अतिरिक्त एक और परिवर्तन भी किया गया। पहले प्रत्येक गुरू साहिबान के सभी 'श्लोकों' का संग्रह एक स्थान पर था और 'वारों' में केवल पउड़ियां ही थीं। गुरू अरजन देव जी ने यह श्लोक वारों की पउड़ियों के साथ दर्ज कर दिए। जो श्लोक बच गए, वे गुरबाणी के इस नए ग्रंथ के अन्त में 'सलोक वारां ते वधीक' के शीर्षक अधीन लिख दिए गए। यह श्लोक प्रत्येक गुरू साहिब के क्रमवार अलग-अलग करके लिखे हुए हैं।

गुरू ग्रंथ साहिब जी में कुल **22 वारें** हैं जिनमें से 21 वारें गुरू साहिबान की और एक वार 'सत्ते बलवंड' की है।

तब समस्त बाणी 30 रागों में दर्ज की गई थी। बाद में गुरू तेग बहादर जी ने एक अन्य राग 'जैजावंती' में भी बाणी उच्चारण की, जो उनकी शेष बाणी के साथ, दशम पातशाह जी ने गुरू ग्रंथ साहिब जी में दर्ज करवा दी। इस प्रकार मौजूदा श्री गुरू ग्रंथ साहिब में **31 रागों** में बाणी दर्ज है; जो इस प्रकार है :

(1) सिरी रागु, (2) माझ, (3) गउड़ी, (4) आसा, (5) गुजरी, (6) देवगंधारी, (7) बिहागड़ा, (8) वडहंस, (9) सोरठि, (10) धनासरी, (11) जैतसरी, (12) टोडी, (13) बैरागी, (14)तिलंग, (15) सूही, (16) बिलावल, (17) गोंड, (18) रामकली, (19) नट नरायण, (20) माली गउड़ा, (21) मारू, (22) तुखारी, (23) केदारा, (24) भैरउ, (25) बसंत, (26) सारग, (27) मलार, (28) कानड़ा, (29) कल्याण, (30) प्रभाती, और (31) जैजावंती। प्रोफैसर साहिब सिंघ जी के अनुसार गुरू ग्रंथ साहिब (आदि बीड़) की समस्त बाणी की लिखाई भाई गुरदास जी ने लगभग डेढ वर्ष में कर ली थी।

गुरू ग्रंथ साहिब की बाणी का आन्तरिक क्रम

गुरू ग्रंथ साहिब जी के आरम्भ में ' ' से 'गुरप्रसादि' तक मूल-मन्त्र है, इसको मंगलाचरण भी कहते हैं। इससे आगे 'जपु' बाणी है जो गुरू नानक देव जी द्वारा उच्चारण की हुई है। इसमें 38 पउड़ियां और दो श्लोक हैं। एक श्लोक **(आदि सचु, जुगादि सचु॥ है भी सचु, नानक होसी भी सचु॥)** आरम्भ में और दूसरा श्लोक (**पवणु गुरू पाणी पिता, माता धरति महतु॥** वाला) अन्त में है।

इससे अगली बाणी के दो भाग हैं : 'सो दरु' और 'सो पुरखु'। 'सो दरु' में पांच शब्द हैं और 'सो पुरखु' में चार। यह बाणी शाम के समय पढ़ी जाती है। इसको 'रहरासि' भी कहते हैं।

इसके पश्चात 'सोहिला' है, जिसमें पांच शब्द हैं। रात्रि को सोने के समय इसका पाठ करने का निर्देष है। आगे बाणी 31 रागों में दर्ज है, जिनके नाम पहले लिखे

गए हैं।

रागों के अन्त में यह बाणियां हैं :

सलोक सहसकृति महला १ से ४, सलोक सहसकृति महला ५ के ६७, गाथा महला ५ के २४, फुनहे महला ५ के २३, चउबोले महला ५ के ११, सलोक भक्त कबीर जी के २४३, सलोक शेख फरीद के १३०, सवैये श्री मुखबाक महला ५ के ९+११, सवैये ११ भट्टों के १२३, सलोक वारां ते वधीक (म: १ के ३३, म: ३ के ६७, म: ४ के ३०, म: ५ के २२), सलोक महला ९ के ५७, मुंदावणी महला ५ (थाल विचि तिनि वसतू पईओ), सलोक महला ५ (तेरा कीता जातो नाही)।

अन्त में 'राग माला' दर्ज है, जिसके बारे में पंथक विद्वानों में मतभेद हैं। इस सम्बन्ध में 'सिख रहित मर्यादा' में यह पंथक निर्णय दर्ज है : 'श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी के पाठ (सहज अथवा अखंड) का भोग 'मुंदावणी' पर अथवा 'रागमाला' पढ़कर प्रचलित स्थानीय रीति के अनुसार डाला डाये। (इस बात को लेकर पंथ में अभी तक मतभेद है। इसलिए रागमाला के बिना श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी की बीड़ लिखने अथवा छापने का कोई प्रयास न करे।''

रागों में बाणी का क्रम

प्रत्येक राग में बाणी-क्रमांक का ब्यौरा साधारणतया: इस प्रकार है :

शब्द, अष्टपदियां, छंत, वार, भक्तों की बाणी। यह शब्द, अष्टपदियां, छंत आदि भी विशेष क्रमानुसार दर्ज हैं : पहले गुरू नानक देव जी के, फिर गुरू अमरदास जी, गुरू रामदास जी और अन्त में गुरू अरजन देव जी के। गुरू अंगद देव जी के 'शब्द' नहीं हैं, केवल 'श्लोक' ही हैं जो अलग-अलग नौं वारों की पउड़ियों के साथ दर्ज हैं। गुरू तेग बहादर जी के शब्द जिस राग में हैं, वहां वह क्रमानुसार गुरू अरजन साहिब के शब्दों के पीछे दर्ज हैं।

भाई गुरदास जी ने समस्त बाणी की लिखाई भादों वदी 1, सम्वत् 1661 (सन् 1604) को सम्पूर्ण कर ली थी। फिर गुरबाणी की विषय-सूची लिखनी आरम्भ की। यह बात भाई साहिब ने विषय सूची के आरम्भ में इस प्रकार लिखी है : ''सूची-पत्र पोथी का, ततकरा रागां का, सम्वत् १६६१ मिती भादउ वदी एकम १, पोथी लिखि पहुंचे।'' इसका भावार्थ है कि सारी बीड़ की लिखाई सम्पूर्ण करके भाई गुरदास जी सम्वत् 1661 भादों वदी एक को विषय-सूची (ततकरा) पर पहुंचे थे।

भाई गुरदास जी द्वारा लिखी गई 'बीड़' के 974 अंक (पेज़) हैं। विषय सूची लिखते समय प्रत्येक शब्द की प्रथम पंक्ति लिख कर उसके सामने पृष्ट का नंबर

दर्ज करना था। यह समस्त कार्य काफी परिश्रम वाला था। फिर 'बीड़' की जिल्द भी बंधवानी थी; जिसको सूखने में कुछ दिन लग जाने थे। इसलिए, समस्त कार्य लगभग पन्द्रह दिनों में, भादों, वदी 15 से पहले पूरा हो गया। अगले दिन भादों सुदी 1 (अमावस से अगला दिन) सम्वत् 1661 (16 अगस्त, सन् 1604) को आदि बीड़ को रामसर से दरबार साहिब (हरिमन्दिर साहिब) लाकर प्रकाश कर दिया। बाबा बुड्ढा जी को प्रथम ग्रंथी की सेवा सौंपी गई।

श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी ने दमदमा साहिब, तलवंडी साबो में भाई मनी सिंघ जी से श्री गुरू ग्रंथ साहिब की एक और बीड़ लिखवाई उसमें **गुरू तेग बहादर साहिब जी की बाणी भी** (प्रत्येक राग में अपने स्थान पर) दर्ज कर दी। (इस बीड़ को 'दमदमी बीड़' कहा जाता है।) आप जी ने ज्योति ज्योत समाने से एक दिन पहले नांदेड़ (महाराष्ट्र) के स्थान पर 6 अक्तूबर, सन् 1708 को गुरू ग्रंथ साहिब जी को गुरियाई बखश दी।

गुरियाई के ऐतिहासिक प्रमाण :

रहितनामा भाई नंद लाल सिंघ, भाई चउपा सिंघ, गुरबिलास पातशाही ६, गुरबिलास पातशाही १० (भाई कोइर सिंघ), बंसावलीनामा दस पातशाहियों का (भाई केसर सिंघ), महिमा प्रकाश (बावा सरूप दास)...आदिक ऐतिसाहिक ग्रंथों में श्री गुरू गोबिंद सिंघ जी द्वारा श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी को गुरियाई देने के प्रमाण स्पष्ट मिलते हैं। फारसी की रचनाओं 'उमदा-तु-तवारीख' और 'तारीखि-बहिर-उल मावाज' में भी गुरियाई का ज़िक्र मिलता है :

(क) भाई नंद लाल सिंघ जी का रहितनामा :

दूसर रूप ग्रंथ जी जानहु॥ आपन अंग मेरो कर मानहु॥...
मेरा रूप ग्रंथ जी जान॥ इस मै भेद नही कछु मान॥

(ख) रहितनामा भाई प्रहलाद सिंघ

अकाल पुरख के बचन सिउं, प्रगट चलायो पंथ॥
सभ सिखन को बचन है, गुरू मानीअहु ग्रंथ॥ ३०॥

(ग) बंसावलीनामा दसां पातशाहीआं का

दसवां पातशाह गद्दी गुरियाई की ग्रंथ साहिब को दे गया।
जो ग्रंथ साहिब जी ते मुड़े॥ निसचे सोई जानो रुड़े॥ (२६७)

(घ) उमदातु-तवारीख

'गुरू ग्रंथ जी असत॥
दरमिआन ग्रंथ वा गुरू हीच फरके नीसत॥

अज़ दीदारि ग्रंथ जी मुशहिदाइ फ़रहत आसारि गुरू साहिब बाइद नमूद॥'

अर्थात् : गुरू ग्रंथ जी हैं। ग्रंथ और गुरू में कोई अन्तर नहीं है। ग्रंथ जी के दर्शनों से गुरू साहिब के खुशियों भरे दर्शन होंगे।

शब्द गुरू

अकाल पुरख से एकस्वर होने के पश्चात जो ज्ञान सतिगुरों को प्राप्त हुआ उसको 'शब्द' कहा जाता है। जब शब्द को लिखित रूप दे दिया गया तो यह बाणी अथवा गुरबाणी कहलवाया। गुरू गरंथ साहिब जी में अकाल पुरख का शब्द अथवा अकाल पुरख की बाणी ही है, इसलिए गुरू ग्रंथ साहिब जी को 'शब्द का भण्डार' अथवा 'शब्द गुरू का स्वरूप' कहा जाता है। गुरबाणी/शब्द के गुरू होने का प्रचार पहले गुरू जी के समय से ही होना आरम्भ हो गया था। उन्होंने स्वयं 'सिध गोसटि' नामक बाणी में स्पष्ट किया है :

सबदु गुरू, सुरति धुनि चेला॥

(रामकली, म: १, सिध गोसटि, ९४३)

(**अर्थ :** शब्द मेरा गुरू है; उसमें सुरत को टिकाना उस (शब्द) का सिख होना है।)

'शब्द गुरू' के सिद्धान्त को भाई गुरदास जी इस प्रकार प्रकटाते हैं :

सबदु गुरू गुर जाणीऐ, गुरमुखि होइ सुरति धुनि चेला॥

(वार ७ : २०)

जो शब्द-गुरू से नेतृत्व नहीं लेते सतिगुरों के अनुसार वे मनुष्य जीवन में भटकते रहते हैं; वे तो ना-समझ हैं :

-सबदु गुर पीरा, गहिर गंभीरा
बिनु सबदै जगु बउरानं॥ *(सोरठि, महला ५, ६३५)*
-सबदु न जाणहि, से अंने बोले
से कितु आए संसारा॥ *(सोरठि, महला ३, ६०१)*

गुरू रामदास जी ने शब्द/गुरबाणी के गुरू होने के सिद्धान्त को इस प्रकार प्रकट किया है :

बाणी गुरू, गुरू है बाणी, विचि बाणी अंम्रित सारे॥
गुर बाणी कहै, सेवक जनु मानै, परतखि गुरू निसतारे॥

(नट, महला ४, ९८२)

गुरबाणी के इतने स्पष्ट हुक्म होने के बावजूद भी गुरू साहिबान के समय से ही कई मनुष्य धन-पदार्थों और सम्पत्ति के लालच के कारण देही-पूजा करवाने

के चक्र में लगे हुए हैं। गुरू गोबिंद सिंघ जी द्वारा गुरू ग्रंथ साहिब जी को पारम्परिक तौर पर गुरियाई बख्शिश कर देने के पश्चात भी नामधारी साम्प्रदाय ने शखसी-गुरियाई को जारी रखा हुआ है। बेदी-सोढी भी अपने आप को गुरू-संतान बता कर अपनी पूजा करवाते रहे हैं। इस समय तो असंख्य साध लोगों को शब्द से तोड़ कर अपने चरणों से जोड़ रहे हैं। निरंकारी और राधा स्वामी बाबे गुरबाणी की गल्त व्याख्या करके गुरू-डम्म की गद्दियां चला रहे हैं। आशूतोश, भनियारे वाला साध और सिरसे वाले 'सच्चे-सौदे' के प्रमुख गुरमीत राम रहीम सिंघ शब्द-गुरू के मुकाबले 'गुरू' बने बैठे हैं। ऐसे पाखण्डी और धन के पुजारी गुरूओं के बारे में गुर-फुर्मान है :

सतिगुर की बाणी सति सरूपु है, गुरबाणी बणीऐ॥
सतिगुर की रीसै, होरि कचु पिचु बोलदे
से कूड़िआर कूड़े झड़ि पड़ीऐ॥
ओना अंदरि होरु, मुखि होरु है
बिखु माइआ नो झखि मरदे कड़ीऐ॥

(गउड़ी की वार, महला ४, ३०४)

गुरबाणी के प्रमुख सिद्धान्त

जीवन मनोरथ

सिख का जीवन-मनोरथ प्रभु से अभेदता प्राप्त करना है; उससे जुड़े रहना है। मनोरथ की प्राप्ति साध-संगत में जाकर प्रभु का यश गाने, सिफति-सालाह करने अथवा नाम जपने से होती है :

भई परापति मानुख देहुरीआ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ॥
अवरि काज तेरै कितै न काम॥
मिलु साधसंगति भजु केवल नाम॥ *(आसा, महला ५, पृष्ठ ३७८)*

नाम सिमरन

प्रभु के गुण गा-गा कर, उसकी याद को अपने हृदय में सुदृढ़ता से बसा लेना और जीवन के सभी कार्य-व्यवहार करते हुए; प्रभु की याद में जुड़े रहना नाम सिमरन है :

गुणा का गाहकु होवै, सो गुण जाणै॥ अंम्रित सबदि नामु वखाणै॥
साची बाणी सूचा होइ॥ गुण ते नामु परापति होइ॥

(आसा, महला ३, पृष्ठ ३६१)

नाम सिमरन का ढंग है : सतिगुरू की शरण में आकर, उसका हुक्म मान कर, प्रभु के गुण कहने (अथवा गाने :

गुन कहु, हरि लहु, करि सेवा सतिगुर
इव हरि हरि नामु धिआई॥

(धनासरी, महला ४, पृष्ठ ६६९)

परमात्मा

जो अदृश्य शक्ति खंडों-ब्रह्मंडों, दृश्य और अदृश्य सृष्टियों को उत्पन्न करने वाली है, उनका प्रबन्ध कर रही है, उसका नाम परमात्मा है। इसका स्वरूप (गुणों के रूप में) मूल-मन्त्र में इस प्रकार ब्यान किया है :

सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति
अजूनी सैभं गुर प्रसादि॥ ***(गुरू ग्रंथ साहिब, पृष्ठ १)***

गुरू

अज्ञानता के अन्धकार में ज्ञान का प्रकाश करने वाले और प्रभु में अभेद, प्रभु के समान शखसीयत को गुरू कहा गया है। गुरू सिख के जीवन-मार्ग को प्रकाशमान करता है; एक गाईड की तरह सिख का नेतृत्व करता है; सिख का जीवन सफल करके उसको प्रभु में अभेद कर देता है :

गुर ते गिआनु ऊपजै महा ततु बीचारा॥
गुर ते घरु दरु पाइआ भगती भरे भंडारा॥

(आसा, महला ३, असट., पृष्ठ ४२४)

गुर गोविंदु, गुोविंदु गुरू है, नानक भेदु न भाई॥

(आसा, महला ४, पृष्ठ ४४२)

सिख कौण?

जो व्यक्ति हृदय में प्रेम और श्रद्धा-भावना धारण करके और मन की मति त्याग कर गुरू की शिक्षा को सुनता और मानता है अथवा गुरू द्वारा समझाया कार्य-व्यवहार करता है, वह सिख है :

सो सिख सखा बंधपु है भाई, जि ुर के भाणे विचि आवै॥
आपणै भाणै जो चलै भाई, विछुड़ि चोटा खावै॥

(सोरठि, महला ३, ६०१)

धर्म

प्रभु का नाम सिमरन करना और शुभ कर्म करने (ऊंचा आचरण बनाना) यही धर्म है :

सरब धरम महि स्रेसट धरमु॥

हरि को नामु जपि, निरमल करमु॥

(गउड़ी, सुखमनी, महला ५, पृष्ठ २६६)

सति-संगत

सति-संगत ऐसा अस्थान है जहां गुरू की मति ग्रहण की जाती है। यह सतिगुरू की पाठशाला है जहां परमात्मा के गुण सीखे जाते हैं, जहां हृदय को पवित्र (विकार रहित) किया जाता है, अज्ञानता का अन्धकार काटा जाता है और प्रभु का प्रकाश मन में हो जाता है :

सतसंगति सतिगुर चटसाल है, जितु हरि गुण सिखा॥

(कानड़े की वार, महला ४, पृष्ठ १३१६)

मिलि संत सभा मनु मांजीअै भाई, हरि कै नामि निवासु॥
मिटै अंधेरा अगिआनता भाई, कमल होवै परगासु॥

(सोरठि, महला १, पृष्ठ ६३९)

कर्म (कार्य)

जीव जैसे (अच्छे अथवा बुरे) कार्य करते हैं, वैसा ही फल उनको भोगना पड़ता है :

करि करि करणा लिखि लै जाहु॥
आपे बीजि आपे ही खाहु॥ ***(जपु जी, पउड़ी २०)***
फलु तेवेहो पाईअै, जेवेही कार कमाईअै॥

(आसा की वार, महला १, पृष्ठ ४६८)

प्रभु का हुक्म

हुक्म उन सिद्धान्तों का समूह है, जिनके द्वारा अकाल पुरख सृष्टियों का निर्माण करता, उनका प्रबन्ध करता (चलाता) और जीवों के भाग्य का निर्णय करता है। सब कुछ प्रभु के आदेश में है, हुक्म से स्वतन्त्र कोई वस्तु भी नहीं :

पाताल पुरीआ लोअ आकारा॥
तिसु विचि वरतै हुकम करारा॥
हुकमे साजे, हुकमे ढाहे, हुकमे मेलि मिलाइदा॥

(मारू, महला ३, पृष्ठ १०६०)

जीवों के बारे में प्रभु का आदेश उन (जीवों) के किए कर्मों के अनुसार ही होता है :

हुकमि चलाए आपणै, करमी वहै कलाम॥
नानक सचा सचि नाइ, सचु सभा दीवानु॥

(सारग की वार, महला १, पृष्ठ १२४१)

प्रभु की रज़ा

जो कुछ प्रभु को अच्छा लगे (भाता हो), वह प्रभु की रज़ा है। प्रभु द्वारा मिले दुख-सुख और खुशी-गमी को अपने भले के लिए समझना, रज़ा में रहना है :

सुखु दुखु तेरी आगिआ पिआरे, दूजी नाही जाइ॥ ३॥
जो तूं करावहि सो करी पिआरे, अवरु किछु करणु न जाइ॥

(आसा, महला ५, पृष्ठ ४३२)

नदर (मेहर)

गुरबाणी में 'नदरि' के लिए मेहर, बख्शिश, कृपा, दया, कर्म आदिक शब्द भी प्रयोग किए गए हैं। प्रभु-प्राप्ति अथवा अपने जीवन के उदार (सफलता) के लिए अहंकार की भावना के बिना किए यत्न ही फलीभूत होते हैं :

नदरी सतगुरु सेवीऐ, नदरी सेवा होइ॥
नदरी इहु मनु वसि आवै, नदरी मनु निरमलु होइ॥

(वडहंसु, महला ३, पृष्ठ ५५८)

देवी-देवते

देवी-देवते प्राचीन धर्म-ग्रंथों की कल्पित हस्तियां हैं, जिनकी पूजा अलग-अलग इच्छाओं की पूर्ति का साधन बताई गई हैं। गुरमति में इनकी हस्ति (अस्तित्व) को ही स्वीकार नहीं किया गया, बल्कि यह कहा गया है कि कल्पित देवी-देवते तो अपने समय के राजे थे। यह भी प्रभु का अन्त नहीं पा सके :

जुगह जुगह के राजे कीए, गावहि करि अवतारी॥
तिन भी अंतु न पाइआ ता का, किआ करि आखि वीचारी॥

(आसा, महला ३, पृष्ठ ४२३)

अहंकार

अपने आप को वाहिगुरू से अलग समझना, अपने अलग और प्रभु से स्वतन्त्र अस्तित्व का अहसास-इसको अहंकार कहते हैं। अहं को दूर करने से ही जीव रूपी स्त्री और प्रभु रूपी पति का मिलाप होता है। गुरू के शब्द अनुसार जीवन जीने से अहं की समाप्ति होती है :

धन पिर का इक ही संगि वासा, विचि हउमै भीति करारी॥
गुरि पूरै हउमै भीति तोरी, जन नानक मिले बनवारी॥

(मलार, महला ४, पृष्ठ १२६३)

माया

प्रत्येक ऐसी वस्तु जिससे प्रेम डाल कर प्रभु भूल जाए, सांसारिक पदार्थों से मोह उत्पन्न हो जाए वह माया है :

एह माइआ जितु हरि विसरै, मोहु उपजै
भाऊ दूजा लाइआ॥ *(रामकली, महला ३, अनंदु, पृष्ठ ९२१)*

पांच-विकार

पांच विकार हैं : काम, क्रोध, लोभ, मोह और हंकार। यह मनुष्य में दैविक (ईश्वरीय) और नैतिक (सदाचारक) गुण समाप्त कर देते हैं। मनुष्य को पाप-कर्मों में लगा देते हैं; मनुष्य के शरीर को अत्यधिक निर्बल बना देते हैं :

इसु देही अंदरि पंच चोर वसहि
कामु क्रोधु लोभु मोहु अहंकारा॥
अंम्रितु लूटहि, मनमुख नही बूझहि, कोइ न सुणै पूकारा॥

(सोरठि, महला ३, पृष्ठ ६००)

मृत्यु

मृत्यु शरीर और आत्मा के वियोग को कहते हैं। जब आत्मा मानव शरीर से निकल जाती है तो कहते हैं, मनुष्य की मृत्यु हो गई है, मनुष्य मर गया है। वास्तव में मरती कोई वस्तु नहीं बल्कि आत्मा एक शरीर को त्याग कर, दूसरे शरीर को धारण कर लेती है, अथवा परमात्मा में अभेद हो जाती है :

नह किछु जनमै, नह किछु मरै॥
आपन चलितु, आप ही करै॥

(गउड़ी, सुखमनी महला ५, पृष्ठ २८१)

पवनै महि पवनु समाइआ॥
जोती महि जोति रलि जाइआ॥
माटी माटी होई एक॥ रोवनहारे की कवन टेक॥
कउनु मूआ रे, कउनु मूआ॥ ब्रहम गिआनी मिलि करहु बीचारा
इहु तउ चलतु भइआ॥

(रामकली, महला ५, पृष्ठ ८८५)

स्वर्ग-नरक

अधिकतर धर्मों का विश्वास है कि स्वर्ग-नरक ऐसे स्थान हैं, जहां मृत्यु के बाद जीव (सूक्ष्म रूप में) जाते हैं। स्वर्गों में सुख और नर्कों में दुख मिलते हैं। गुरबाणी स्वर्ग-नर्क के विचार को पूरी तरह रद्द करती है। गुरमुखों के लिए प्रभु में लीनता स्वर्ग है और आवागमन के चक्र में पड़ना नर्क :

कवनु नरकु किआ सुरगु बिचारा, संतन दोऊ रादे॥

हम काहू की काणि न कढते अपने गुर परसादे॥

(रामकली, कबीर जी, पृष्ठ ९६९)

आवागमन

दुष्कर्मियों को जन्म-मरण के चक्र में पड़ना पड़ता है, जिस को आवागमन कहते हैं। जीवात्मा अलग-अलग जूनों में, किए कुकर्मों का फल भोगती है :

सूकर सुआन गरधभ मंजारा॥ पसू मलेछ नीच चंडाला॥
गुर ते मुहु फेरे, तिन् जोनि भवाईऐ॥
बंधनि बाधिआ, आईऐ जाईऐ॥*(बिलावलु, महला १, पृष्ठ ८३२)*

जीवन-मुक्ति

जीवन-मुक्ति से अभिप्राय है संसार में रहते हुए माया और विकारों के प्रभाव से मुक्त (आज़ाद) रहना और सदैव प्रभु से जुड़े रहना :

तजि अभिमान मोह माइआ, फुनि भजन राम चितु लावउ॥
नानक कहत मुकति पंथ इहु, गुरमुखि होइ तुम पावहु॥

(गउड़ी, महला ९, पृष्ठ २१९)

प्रेम-आपा-भाव का त्याग

प्रेम अपनी हस्ति (अहं-भाव) को त्याग कर ही किया जा सकता है। प्रेम के लिए अपना-आप कुर्बान करना और लोक-लाज का त्याग करना प्राथमिक आवश्यकताएं हैं। सच्चे प्रेमी (भक्त) प्रभु-प्रीतम से मुंह नहीं मोड़ते, सभी बाधाओं का मुकाबला करते हुए प्रभु-मार्ग पर आगे ही आगे बढ़ते रहते हैं :

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ॥ सिरु धरि तली गली मेरी आउ॥
इतु मारगि पैरु धरीजै॥ सिरु दीजै काणि न कीजै॥

(सलोक, महला १, पृष्ठ १४१२)

रते सेई जि मुखु न मोड़ंनि्, जिनी् सिञाता साई॥
झड़ि झड़ि पवदे कचे बिरही, जिना् कारि न आई॥

(सलोक, महला ५, पृष्ठ १४२५)

चढ़ती कला

अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए संघर्षशील जीवन व्यतीत करना चढ़ती कला की निशानी है। चढ़ती कला के धारणी, एक प्रभु के विश्वास से, दुखों को सुखों, पराजय को विजय, बुराई को अच्छाई, गमी को खुशी और हानि को लाभ में बदल लेते हैं। उनके लिए दुख, बुराई, पराजय, अफसोस, हानि आदि कोई अर्थ नहीं रखते :

दुखु नाही, सभु सुखु ही है रे, एकै एकी नेतै॥
बुरा नही, सभु भला ही है रे, हार नही सभ जेतै॥ १॥
सोगु नाही, सदा हरखी है रे, छोडि नाही किछु लेतै॥

(कानड़ा, महला ५, पृष्ठ १३०२)

चौथा पद

चौथे पद का अर्थ है : माया के तीन गुणों **रज** (अहंकार और सांसारिक सुखों की इच्छा वाला स्वभाव), **तम** (अज्ञानता, क्रोध, चिंता वाला स्वभाव) और **सत** (शान्ति, दया, प्रसन्नता वाला स्वभाव) से ऊंची अवस्था। इस अवस्था पर पहुंचे हुए जीव पर विकारों, दुख-सुख, तृष्णा आदि का कोई प्रभाव नहीं पड़ता; वह प्रभु के चरणों में जुड़ा रहता है :

रज गुण, तम गुण, सत गुण कहीऐ, इह तेरी सभ माइआ॥
चउथे पद कउ जो नर चीनै्, तिन् ही परम पदु पाइआ॥

(केदारा, कबीर जी, पृष्ठ ११२३)

चौथे पद के लिए गुरबाणी में तुरीआ पद, परम-पद, सहज पद, निरबाण पद और अभै-पद आदिक शब्द भी प्रयोग किए गए हैं।

सहज अवस्था

चौथे पद में से ही सहज अवस्था पैदा होती है। सहज अवस्था 'आत्मिक अडोलता की अवस्था' है। इस ऊंची आत्मिक अवस्था पर पहुंचे हुए मनुष्य के हृदय पर दुख-सुख, मान-अपमान, उस्तति-निंदा, हर्ष-सोग कोई प्रभाव नहीं डालते। वह प्रभु से निरन्तर जुड़ा रहता है। इस अवस्था पर गुरू की कृपा से ही पहुंचा जा सकता है।

चउथे पद महि सहजु है, गुरमुखि पलै पाइ॥

(सिरी रागु, म: ३, पृष्ठ ६८)

भाई रे गुर बिनु सहजु न होइ॥
सबदै ही ते सहजु ऊपजै, हरि पाइआ सचु सोइ॥ १॥ रहाउ॥
सहजे गाविआ थाइ पवै, बिनु सहजै कथनी बादि॥
सहजे ही भगति ऊपजै, सहजि पिआरि बैरागि॥
सहजै ही ते सुख साति होइ, बिनु सहजै जीवणु बादि॥ २॥

(सिरीरागु, महला ३, पृष्ठ ६८)

अनहत (अनाहद) शब्द

अनहद (अनहद) अथवा अनाहद) शब्द योगमत से आया है। योगी प्राणायाम द्वारा 'कुंडलनी' जगाता है; उसमें उभार आने के समय प्राण एक-एक करके चक्रों

को भेदता है। 'अनाहत चक्र' को भेदते समय जो शब्द पैदा होता है (पांच साज़ों की मिश्रित आवाज़) उसको अनहद (अनाहद) शब्द कहते हैं।

गुरमति में गुर-शब्द में ध्यान जोड़ कर, नाम रस प्राप्त करने और नाम रस का निरन्तर अनंद प्राप्त करने को अनाहद शब्द (अथवा पांच शब्दों की आवाज़) सुनना कहा गया है :

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु॥ देही इस का बिस्रामु॥
सुंन समाधि अनहत तह नाद॥ कहनु न अचरज बिसमाद॥

(गउड़ी, सुखमनी, महला ५, पृष्ठ २९३)

वाजे पंच सबद तितु घरि सभागै॥
घरि सभागै, सबद वाजे, कला जितु धरीआ॥

(रामकली, महला ३, अनंद, पृष्ठ ९१७)

ज्ञान

आध्यात्मिक क्षेत्र में ज्ञान का अर्थ है : आत्मिक सूझ, सत्य (प्रभु) का ज्ञान। सत्य का ज्ञान सभी भ्रम-जाल तोड़ देता है, जीवन-मार्ग को प्रकाशमान करता है और परमानंद की प्राप्ति का साधन बनता है :

गुर ते गिआनु पाइआ, अति खड़गु करारा॥
दूजा भ्रमु गड़ु कटिआ, मोहु लोभु अहंकारा॥

(मारू की वार, महला ३, पृष्ठ १०८७)

जा कै रिदै बिसवासु प्रभ आइआ॥
ततु गिआनु तिसु मनि प्रगटाइआ॥

(गउड़ी, सुखमनी, महला ५, पृष्ठ २८५)

दुख-सुख

दुख-सुख प्रभु की दात हैं, जो मनुष्य के व्यक्तित्व-निर्माण के अनिवार्य हैं। जैसे मनुष्य कपड़े बदलता है, वैसे ही वह दुख और सुख को सहता है। 'दुख' सुखों का कारण बनते हैं और सुखों से दुख उपजते हैं :

सुखु दुखु दुइ दरि कपड़े, पहिरहि जाइ मनुख॥

(वार माझ, महला १, पृष्ठ १४९)

भाणा मंने सदा सुखु होइ॥ ***(आसा, महला ३, पृष्ठ ३६४)***
दूखा ते सुख ऊपजहि सूखी होवहि दूख॥

(प्रभाती, महला ५, पृष्ठ १३२८)

सन्त-साध

जो विकार-रहित हो गए हैं, जिन्होंने अपने मन को साध लिया है और जो

प्रभु के प्यार और नाम के रंग में रंगे गए हैं, वे सन्त हैं :

हउ बलिहारी संतन तेरे, जिनि कामु क्रोधु लोभु पीठा जीउ॥ ३॥
तूं निरवैरु संत तेरे निरमल॥ जिन देखे सभ उतरहि कलमल॥

(माझ, महला ५, पृष्ठ १०८)

प्रचारक

वही मनुष्य धर्म-प्रचारक हो सकता है जो पहले सतिगुरू के उपदेश से अपने मन को ज्ञानवान बनाता है, उपदेश की कमाई करता है और फिर प्रचार करता है :

प्रथमे मनु परबोधै अपना, पाछै अवर रीझावै॥
राम नाम जपु हिरदै जापै, मुख ते सगल सुनावै॥

(आसा, महला ५, पृष्ठ ३८१)

शूरवीर

जो मनुष्य गरीबों को अत्याचारों से बचाने के लिए लड़ता है, जान कुर्बान कर देता है, वह शूरवीर है :

सूरा सो पहिचानीऐ, जु लरै दीन के हेत॥
पुरजा पुरजा कटि मरै, कबहू न छाडै खेतु॥

(मारू, कबीर जी, पृष्ठ ११०५)

कर्म-काण्ड

वेद आदिक ग्रंथों के जिस भाग में यज्ञ, श्राध, व्रत, दान आदिक कर्म करने की विधियां बताई गई हैं, उनको कर्म-काण्ड कहते हैं। गुरबाणी के अनुसार यज्ञ, व्रत, शराध, पुजारियों को दान, दिखावे के पाठ, तीर्थ-यात्रा आदिक कर्म व्यर्थ अथवा फोकट कर्म हैं। केवल प्रभु का यश अथवा नाम-सिमरन ही विकारों से बचने और प्रभु से जुड़ने का धार्मिक कर्म है :

करम धरम पाखंड जो दीसहि, तिन जमु जागाती लूटै॥
निरबाण कीरतनु गावहु करते का, निमख सिमरत जितु छूटै॥

(सूही, महला ५, पृष्ठ ७४७)

पिआरे इन बिधि मिलणु न जाई, मै कीए करम अनेका॥
हारि परिओ सुआमी कै दुआरै, दीजै बुधि बिबेका॥ रहाउ॥

(सोरठि, महला ५, पृष्ठ ६४१)

तीर्थों पर स्नान

सतिगुरों ने तीर्थ-यात्रा और तीर्थ-स्नान का विरोध करते हुए शब्द-विचार, प्रभु-नाम जपने और साध-संगत करने के हो तीर्थ-स्नान करना माना है :

तीरथि नावण जाउ तीरथु नामु है॥
तीरथु सबद बीचारु, अंतरि गिआनु है॥

(धनासरी, म: १, पृष्ठ ६८७)

व्रत रखना

व्रत रखने की अपेक्षा मन में सन्तोष धारण करना, सभी जीवों से दया-प्यार वाला व्यवहार करना आदिक गुणों को हृदय में धारण करना ही वास्तविक व्रत है :

मनि संतोखु सरब जीअ दइआ॥
इन बिधि बरतु संपूरन भइआ॥ ***(गउड़ी, महला ५, पृष्ठ २९९)***

दान-पुण्य

दान करने वाला (दानी) केवल प्रभु ही है, मनुष्य नहीं। गुरमति दान की अपेक्षा गरीबों और ज़रूरतमंदों की 'सेवा' करने का उपदेश देती है :

सभना जीआ का इकु दाता, सो मै विसरि न जाई॥

(जपु जी, पउड़ी ५)

घालि खाइ, किछु हथहु देइ॥
नानक राहु पछाणहि सेइ॥ ***(सारग की वार, महला १, पृष्ठ १२४५)***

'पुण्य' का अर्थ है भला अथवा अच्छा। परन्तु, पुजारियों ने कथित धर्मों-कर्मों (कर्मकाण्ड) करने को ही 'पुण्य' का नाम दिया है, जिसमें उनका अपना भला था। सतिगुरों ने प्रभु-नाम जपने, और सेवा को ही पुण्य-कर्म माना है :

कलि महि एहो पुंनु, गुण गोविंद गाहि॥

(रामकली की वार, महला ५, पृष्ठ ९६२)

किछु पुंन दान, अनेक करणी, नाम तुलि न समसरे॥

(वडहंसु, महला १, पृष्ठ ५६६)

जप-तप

किसी मन्त्र अथवा शब्द का बार-बार रटन करने को 'जप' अथवा हृदय को वश में करने के लिए शरीर को कई प्रकार के कष्ट देने वाले कर्मों का नाम 'तप' है। गुरबाणी में प्रभु के नाम सिमरन और गुरू की शिक्षा पर चलने को अथवा शब्द-विचार को जप-तप माना गया है :

जपु तपु संजमु, नामु पिआरा॥
किलविख काटे काटणहारा॥ ***(मारू, महला ३, पृष्ठ १०६२)***
जपु तपु संजमु, होरु कोई नाही॥
जब लगु गुर का सबदु न कमाही॥ ***(मारू, महला ३, पृष्ठ १०६०)***

मड़ियों (कब्रों) की पूजा

मृतक के संस्कार-अस्थान पर बनाई गई इमारत, देहुरा आदि और कब्र-पूजा प्रभु से दूर लेजाने वाला कर्म है। इसलिए यह गुरमति में विवर्जित-कर्म है :

दुबिधा न पड़उ, हरि बिनु होरु न पूजउ
मड़ै मसाणि न जाई॥ ***(सोरठि, महला १, पृष्ठ ६३४)***

मूर्ति-पूजा

किसी देवी-देवते आदि की पत्थर, लकड़ी अथवा अन्य धातु की मूर्ति बना कर उसकी पूजा करने को 'मूर्ति पूजा' कहा जाता है। गुरबाणी में इसको व्यर्थ-कर्म माना गया है :

जो पाथर कउ कहते देव॥ ता की बिरथा होवै सेव॥
जो पाथर की पांई पाइ॥ तिस की घाल अजांई जाइ॥

(भैरउ, महला ५, पृष्ठ ११६०)

भेस/धार्मिक पहरावा

अलग-अलग धर्मों द्वारा पुजारियों और श्रद्धालुओं के लिए निश्चित किए गए धार्मिक लिबास और धार्मिक चिह्न जब आत्मिक-विकास में सहायक न हों तो 'भेस' बन कर रह जाते हैं। गुरबाणी में भेसों के स्थान पर ईश्वरीय और सदाचारक गुणों को धारण करने की प्रेरणा दी गई है :

बहु भेख करि भरमाईऐ, मनि हिरदै कपटु कमाइ॥
हरि का महलु न पावई, मरि विसटा माहि समाइ॥

(सिरीरागु, महला ३, पृष्ठ २६)

सुच्च/शारीरिक पवित्रता

शारीरिक पवित्रता (स्वच्छता) से कोई आत्मिक प्राप्ति नहीं होती। वास्तव में सुच्चे तो वे हैं जिनका हृदय ईश्वरीय प्रकाश (दैविक गुणों) से पवित्र हो गया है :

सूचे एहि न आखीअहि, बहनि जि पिंडा धोइ॥
सूचे सेई नानका, जिन मनि वसिआ सोइ॥

(आसा की वार, महला १, पृष्ठ ४७२)

शगुन-अपशगुन

वहिमी पुरुष किसी कार्य को आरम्भ करने से पहले शगुन-अपशगुन की विचार करते हैं। गुरबाणी इस विचार का खण्डन करती है :

सगुन अपसगुन तिस कउ लगहि, जिसु चीति न आवै॥

(आसा, महला ५, पृष्ठ ४०१)

सूतक-पातक

शास्त्रों के अनुसार जन्म के समय की अशुद्धि को 'सूतक' और मरने के समय की अशुद्धि को 'पातक' कहा गया है। गुरबाणी में सूतक-पातक को भ्रम रूप जान कर इनका खण्डन किया गया है :

सभो सूतकु भरमु है, दूजै लगे जाइ॥
जंमणु मरणा हुकमु है, भाणै आवै जाइ॥

(आसा की वार, महला १, पृष्ठ ४७२)

गृहस्थ-मार्ग

संसार (परिवार) में रहते हुए ही धर्म की कमाई करनी चाहिए। सांसारिक ज़िम्मेवारियां निभाते हुए, प्रभु की सिफति-सालाह करने से जीवन सफल होता है :

उदमु करेदिआ जीउ तूं, कमावदिआ सुख भुंचु॥
धिआइदिआ तूं प्रभू मिलु, नानक उतरी चिंत॥

(गूजरी की वार, महला ५, पृष्ठ ५२२)

मानवीय एकता

जात-पात के भिन्न-भेद को त्याग कर, सभी मनुष्यों में प्रभु की ज्योति को पहचानना चाहिए :

जाणहु जोति न पूछहु जाती, आगै जाति न हे॥

(आसा, महला १, पृष्ठ ३४९)

अवलि अलह नूरु उपाइआ, कुदरति के सभ बंदे॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ, कउन भले को मंदे॥

(प्रभाती, कबीर जी, पृष्ठ १३४९-५०)

निष्काम सेवा

संसार में रहते हुए, दीन-दुखियों और ज़रूरतमंदों की सेवा करने से प्रभु की दृष्टि में कबूल होते हैं :

विचि दुनीआ सेव कमाईऐ॥ ता दरगह बैसणु पाईऐ॥

(सिरीरागु, महला १, पृष्ठ २६)

स्त्री-जाती

गुरबाणी स्त्री और मर्द की समानता को मानती है। जिस स्त्री ने सन्तों-भक्तों, शूरवीरों और राजाओं को जन्म दिया है, उसकी निंदा करना ठीक नहीं :

भंडि जंमीऐ, भंडि निंमीऐ, भंडि मंगणु वीआहु॥
भंडहु होवै दोसती, भंडहु चलै राहु॥
भंडु मुआ भंडु भालीऐ, भंडि होवै बंधानु॥
सो किउ मंदा आखीऐ, जितु जंमहि राजान॥

(आसा की वार, महला १, पृष्ठ ४७३)

नशे

शराब आदिक नशे पीने से मनुष्य के भीतर विकार ही उत्पन्न होते हैं, बुद्धि मलीन होती है और प्रभु से दूरी हो जाती है :

इतु मदि पीतै नानका, बहुते खटीअहि बिकार॥

(बिहागड़े की वार, पृष्ठ ५५३)

जितु पीतै खसमु विसरै, दरगह मिलै सजाइ॥
झूठा मदु मूलि न पीचई, जे का पारि वसाइ॥

(बिहागड़े की वार, सलोक महला ३, पृष्ठ ५५४)

पति-पत्नी

सुखी जीवन के लिए पति और पत्नी में विचारों की समानता होनी आवश्यक है :

धन पिरु एहि न आखीअनि बहनि इकठे होइ॥
एक जोति दुइ मूरती, धन पिरु कहीऐ सोइ॥

(सूही की वार, महला ३, पृष्ठ ७८८)

किरत करनी और बांट कर खाना

धर्म की किरत करनी और किरत-कमाई में से ज़रूरतमंदों की सेवा करनी- यह सामाजिक समृद्धि का मार्ग है :

घालि खाइ किछु हथहु देइ॥
नानक राहु पछाणहि सेइ॥

(सारंग की वार, सलोक महला १, पृष्ठ १२४५)

पराया हक

किसी का हक मारना पूरी तरह विवर्जित है। यह कार्य अधर्मी लोगों का है :

हकु पराइआ नानका, उसु सूअर उसु गाइ॥
गुरु पीरु हामा ता भरे, जा मुरदारु न खाइ॥

(माझ की वार, सलोक महला १, पृष्ठ १४१)

रुपए-पैसे का समान वितरण

वे मनुष्य, परिवार अथवा समाज ही समृद्ध हो सकता है जहां लोगों के पास

या तो अधिक धन न हो, अथवा बिलकुल कंगाली न हो। अमीर चिन्ताओं में फंसे रहते हैं और गरीब दो वक्त की रोटी और तन ढांपने के लिए कपड़े के लिए भटकते फिरते रहते हैं :

जिसु ग्रिहि बहुतु, तिसै ग्रिहि चिंता॥
जिसु ग्रिहि थोरी, सु फिरै भ्रमंता॥
दुहू बिवसथा ते जो मुकता, सोई सुहेला भालीऐ॥

(मारू, महला ५, पृष्ठ १०१९)

निर्भय और निरवैर होना

न किसी से डरना (न किसी की पराजय स्वीकार करनी) और न ही किसी को डराना, यह धर्मी मनुष्यों के लक्ष्ण हैं :

भै काहू कउ देत नहि, नहि भै मानत आन॥
कहु नानक सुनि रे मना, गिआनी ताहि बखानि॥

(सलोक, महला ९, पृष्ठ १४२७)

जीवन-युक्ति

यह संसार विकारों का सागर है; इसमें विकारों के प्रभाव से बच कर रहना है, माया के प्रभाव और जगत के पदार्थों के मोह से बच कर रहना है, जैसे कि मुर्गाबी पानी में रहती हुए पंखों को पानी के प्रभाव से बचा कर रखती है और जैसे कीचड़ में उगा हुआ कमल का फूल कीचड़ से ऊपर रहता है। इस जीवन-जांच की समझ गुरू के शब्द में सुरत को जोड़ने से आती है :

जैसे जल महि कमलु निरालमु, मुरगाई नै साणे॥
सुरति सबदि भव सागरु तरीऐ, नानक नामु वखाणे॥

(रामकली, सिध गोसटि, महला १, पृष्ठ ९३८)

श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी के तुल्य किसी पुस्तक को विस्थापित नहीं करना।

-सिख रहित मर्यादा (शीर्षक : गुरद्वारे)
प्रकाशक : शिरोमणि गु: प्र: कमेटी, अमृतसर।

